RESEARCH PAPER | History | Volume : 3 | Issue : 7 | July 2013 | ISSN - 2249-555X

आचार्य रविषेण का व्यक्तित्व एवं कृतित्वः
Aacharya Ravisen ka vyaktitva avam krutitva

KEYWORDS: Corrosion inhibition, Mild Steel, EIS, Transition metal complex

Shashi Morolia

शोध विद्यार्थी–सिंघानिया यूनिवर्सिटी, पचेरी बड़ी झुंझुनू . राजस्थान

पूर्व मध्यकालीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के अध्ययन के लिए जैन साहित्य की महत्ता सभी विद्वान स्वीकार करते है। जैन पुराणों की एक विशेषता है कि उनकी मूल कथा वस्तु में विभिन्न लेखकों में कोई उल्लेखनीय मतभेद नहीं है। इसीलिए जैन पुराणों में इतिहास सुरक्षित है।

आचार्य रविषेण : परिचयः
जीवनकाल :

अधिकांश लेखकों की भांति रविषेण के जीवन वृतान्त के विषय में भी अंतिम रूप से कुछ कहना संभव नहीं है। आचार्य ने अपने जीवन काल की तिथि का कहीं उल्लेख नहीं किया है। 'पद्म पुराण' के अन्तः साक्ष्य के आधार पर इस ग्रन्थ का समापन विक्रम संवत 733–34 अर्थात 676–77 ई. में माना गया है। डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन के विचार में भी ग्रन्थ का लेखन 676 ई. के वैशाख मास के शुक्ल पक्षारम्भ में, अक्षय तृतीया के दिन पूर्ण हुआ था।[2] डॉ. रमाकान्त शुक्ल ने अपने शोध ग्रन्थ में यह मत प्रतिपादित किया है कि यह रचना कवि के जीवन में प्रौढ़ता आने पर ही हुई होगी, अतः कवि का जीवन काल 640–680 ई. के मध्य का माना जा सकता है।[3]

रविषेण का स्मरण परवर्ती लेखकों नें भी किया है। आचार्य जिनसेन ने अपने ग्रन्थ हरिवंश पुराण में लिखा है –रविषेण आचार्य की काव्यमयी मूर्ति सूर्य की मूर्ति के समान लोक में अत्यन्त प्रिय थी जैसे सूर्य का प्रकाश प्रतिदिन परिवर्तित होता रहता है वैसे ही रविषेण का अभ्युदय, भी प्रतिदिन परिवर्तित होता रहता है। [4]

इसी तरह उद्योतन्सूरि ने अपने ग्रन्थ 'कुवलयमाला' में रविषेण का उल्लेख विक्रम संवत् 836 में करते हुए लिखा है कि जो आचार्य रविषेण ने 'पद्मपुराण' विस्तार से लिखा है वह अत्यन्त रमणीक है।[5]

अपभ्रंश कवि स्वयंभू ने भी अपने पउम चरिउ में कहा कि मेरी बुद्वि का प्रसार रविषेण की कृति के अवगासन से हुआ है।[6] रविषेण के इस पद्म पुराण या पद्म चरित पर राजा भोज (परमार) के राज्य काल (सं. 1087) में धारा नगरी में श्री चन्द्र मुनि ने लिखा था।[7]

उपरोक्त उल्लेखों से यही प्रमाणित होता है कि पुन्नाटसंघीय आचार्य जिनसेन, उद्योतनसुरि तथा स्वयंभू के समय तक रविषेण अपनी कृति पद्म पुराण के कारण विद्वत्जगत् में सम्मान प्राप्त कर चुके थे। लेकिन इन उल्लेखों से उनका जीवनकाल निर्धारित करने में कोई मदद नहीं मिलती है। हम निश्चित रूप से इतना ही कह सकते है कि यह कृति 677–678 ई. में पूर्ण हुई। किन्तु रविषेण का जीवन काल कब से कब तक था, इस विषय में अभी पर्याप्त शोध की आवश्यकता है।

गुरूवंश की परम्परा –
पद्मपुराण के अन्तिम वर्ष में रविषेण ने इस विषय पर प्रकाश डालते हुए लिखा है– ''इन्द्र गुरू के दिवाकरयति के अर्हन्मुनि के सामणसेन का मैं रविषेण शिष्य हूं।''[8]

रविषेण किस गज गच्छ के थे? यह स्पष्ट नहीं कहा जा सकता। पं. नाथूराम प्रेमी ने प्रयास किये है। अपने ग्रन्थ में उन्हें ''सेन संघ'' का होना बताया है। क्योंकि, सभी गुरूओं के नाम के अन्त में सेनान्त शब्द प्रयुक्त है। उनके गुरू परम्परा के पूरे नाम इन्द्रसेन और दिवाकर सेन होंगे ऐसा जान पड़ता है।[9] अन्यत्र भी उल्लेख है कि सेनान्त नाम होने से वे सेनसंघ के विद्धान थे।[10]

जन्म स्थान –
डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री का कथन है कि रविषेण दक्षिण भारतीय थे।[11] रविषेणाचार्य ने इस विषय में कोई चर्चा नहीं की है। वैसे भी एक दिगम्बर आचार्य को देश की सीमा में बांधा नहीं जा सकता, क्योंकि जैन साधु किसी एक स्थान पर स्थायी नहीं रहते है। इसलिए रविषेणाचार्य के विवरण भी व्यापकता लिए हुए है। फिर भी इस बात की अधिक संभावना है कि वे उत्तर भारत के किसी स्थान के मूल निवासी थे। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का कथन कि आचार्य जी ने संभवतयाः उत्तर या मध्य भारत के किसी स्थान पर पद्मपुराण का लेखन किया है।[12] इस दिशा में डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये, श्री अगरचंद नावदा व पं. नाथूराम प्रेमी ने भी प्रयास किया है पर वे भी निश्चित स्थान बताने में असमर्थ है।[13] इस तरह निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि आचार्य रविषेण दक्षिण भारत के नहीं थे।

पारिवारिक जीवन व रविषेण की धार्मिक मान्यताएं :–
ग्रन्थ में रविषेण के माता–पिता का कोई विवरण नहीं है। ग्रन्थ प्रणयम के समय वे जैन आचार्य थे। उससे पूर्व का जीवन क्या था, इस विषय में डॉ. रमाकान्त शुक्ल का अभिमत है कि आचार्य रविषेण ने युवावस्था में स्त्री विरह की पीड़ा भोगी होगी, जिसके कारण इन्होनें विरक्त होकर दीक्षा धारण की। इसके लिए डॉ. शुक्ल ने ग्रन्थ के कुछ उदाहरण (18/13 व 26/31) आधार रूप में प्रस्तुत किये है।[14] संभवतः रविषेण का संयोग वियोग सम्बन्धी अनुभव व ज्ञान बहुत गहन था।

कृतिः –
आचार्य रविषेण का एक मात्र ग्रन्थ 'पद्मपुराण' ही है, अन्य ग्रन्थ का प्रणयन उन्होनें नहीं किया।

रामकथा की भारतीय परम्परा एवं पद्मपुराण में उपलब्ध रामकथा–
वस्तुतः 'वाल्मीकि रामायण' की समस्त प्रचलित रामकथा साहित्य का मूल स्त्रोत है। अत्यन्त विस्तृत रामकथा साहित्य में जो विभिन्नता आ गयी है, वह वाल्मीकि रामायण के विकास तथा उसके कथानक पर विभिन्न प्रभावों का परिणाम है।[15]

जैन साहित्य भी रामकथा से ओत–प्रोत है। जैन परम्परा का प्रारम्भ विमलसूरि के 'पउम चरिय' से होता है। विमलसूरि के समय तक हिन्दू रामकथा का रूप, पूर्ण विकसित संभवतः हो चुका था। रामकथा को सुस्थापित करने का सम्पूर्ण श्रेय वाल्मीकि को है।[16] वाल्मीकि के आधार पर महाभारत का 'रामोपाख्यान' लिखा गया, व जैन लेखकों ने भी इस विषय पर तार्किक रूप से लिखा।

रामकथा की वाल्मीकि परम्परा–
रामकथा की वाल्मीकि परम्परा विश्व विश्रुत है जिसे सरल व संक्षिप्त रीति से इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है–

राजा दशरथ अयोध्या के इक्ष्वाकुवंशी शासक थे। वृद्वावस्था में उनकी विभिन्न पत्नियों कौशल्या,कैकेयी,सुमित्रा से राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न चार पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें राम बड़े थे व गुणों में भी सर्वोत्तम थे। दशरथ ने उन्हें अपना राज्य सोंपना चाहा, परन्तु रानी कैकयी के वरदान मांगने के कारण राम को वनवास लेना पड़ा। उनके साथ उनकी पत्नी सीता व भाई लक्ष्मण वन को गये। वनवास के दौरान ही लंका का राजा रावण ने सीता को अकेली पाकर उसका हरण कर लिया। सीता का पता लगाने में वानर राज सुग्रीव व हनुमान आदि ने मदद की। तदन्तर राम ने सुग्रीव आदि की सहायता से लंका नरेश रावण पर चढाई की। रावण युद्व में हार गया व मारा गया। राम सीता को लेकर पुनः अयोध्या आ गये व अयोध्या का राज्य करने लगे।

इसी विषय वस्तु को आधार बनाकर विविध रामकाव्य निबद्व हुए। आर्य रामायण, बौद्व रामायण, और जैन रामायण सम्बन्धी विविध साहित्य में देखा जा सकता है।

जैन रामकथा की विभिन्न धाराएं व उनके सम्बन्ध साहित्य–
जैन साहित्य में रामकथा के दो महान पुरोधा विमलसुरि (वि.सं. 60) तथा रविषेणाचार्य (वि.सं. 733) को माना जाता है। जैन साहित्य में रामकथा की मूलतः तीन धारायें है।

रामकथा की प्रथम धारा–
इस विचारधारा के अनुसार राम एक सामान्य पुरूष थे, जिन्होनें एक आदर्श मानव व आदर्श शासक के मानदण्ड स्थापित कर जैन धर्म में निर्दिष्ट मार्ग पर चलकर मोक्ष (केवल्य) पद प्राप्त किया था। इस प्रथम धारा में रामकथा विषयक साहित्य निम्नाकिंत हैः–

प्राकृत भाषी :–
1. विमलसूरि का 'पउम चरिउं' (विक्रम सं. 60 अर्थात् 4 ई..)
2. शीलाचार्य का 'चौपन महापुरूष चरियं (665 ई.)
3. भद्रेश्वर की 'कहावति।। वी. शताब्दी ई.)

संस्कृत भाषी–
1. रविषेणाचार्य कृत 'पद्मपुराण' 677–678 ई.।
2. अमित गति लिखित 'धर्म परीक्षा' (1014 ई.)
3. हेमचन्द्र द्वारा लिखा 'योगशास्त्र–स्वप्जन–वृति (12वीं शताब्दी ई. के उत्तरार्द) के अन्तर्गत 'सीतारावण कथानयम'।

Volume : 3 | Issue : 7 | July 2013 | ISSN - 2249-555X

4. हेमचन्द्र द्वारा ही लिखित 'त्रिशष्टिश्लाका पुरूष चरितं (1160 ई.) के अन्तर्गत 'जैन रामायण' (कलकत्ता सं. 1930)
5. धानेश्वर द्वारा रचित 'शत्रुन्जय महात्म्य (14 श. ई.)
6. देवविजय गणी विरचित 'रामचरित' (1595 ई.)
7. मेघविजय द्वारा लिखित 'लघु भियष्टि' (17वीं शताब्दी ई. का उत्तरार्द)।

अप्रभंश भाषी–
1. स्वयंभू लिखित, 'पउम चरिउ' (लगभग 8वीं शताब्दी ई. के मध्य)।

दूसरी धारा–
रामकथा से सम्बन्धित जैन साहित्य की दूसरी धारा के जो ग्रन्थ हैं, उन पर प्रत्यक्ष रूप में वाल्मीकि रामायण का प्रभाव देखा जा सकता है। इस धारा के अन्तर्गत मंथरा दासी का प्रकरण, स्वर्णमृग व शुर्पणखा प्रकरण, वाल्मीकि रामायण की तरह ही स्वीकृत हैं। इस दूसरी धारा के अन्तर्गत प्राकृत भाषी निम्न रचनायें देखी जा सकती है–
1. संपदासगणी का 'वसुदेव हिंडी1 (609 ई.)
2. हरिसेन का 'वृहद्कथा कोष' (931–32 ई.)

तीसरी धारा–
रामकथा विषयक जैन साहित्य की तीसरी धारा की विलक्षणता यह है कि वह दशरथ को वाराणसी का राजा मानती है, तथा सीता को रावण की पत्नी मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न मानती है। इस धारा के प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार है–

1. गुजभद्र लिखित संस्कृत भाषी ग्रन्थ 'उत्तर पुराण' (9वीं शदी ई.)

2. कृष्ण लिखित संस्कृतभाषी ग्रन्थ 'पुण्यचन्द्रोदय पुराण' (16वीं शदी ई.)

3. पुष्पदन्त लिखित अपभ्रंश भाषी 'महापुराण' (965 ई.)

पद्मपुराण की रामकथा का स्रोत –
पद्मपुराण जैन साहित्य का सर्वप्रथम रामकथा विषयक संस्कृत महाकाव्य है। पद्मपुराण के इस कथानक का स्रोत क्या है? इस प्रश्न का समाधान पद्मपुराण के प्रथम वर्ष में इस प्रकार किया गया है कि ''वर्धमान जिनेन्द्र के द्वारा इन्द्रभूति नाम गौतम गणधर को प्राप्त हुआ, फिर धारिणी के पुत्र सुधर्माचार्य को प्राप्त हुआ, फिर प्रभव को प्राप्त हुआ, फिर उत्तरवागमी अर्थात श्रेष्ठ वक्ता कीर्तिधर आचार्य को प्राप्त हुआ। तदन्तर उनका लिखा प्राप्त कर यह रविषेणाचार्य का प्रयत्न प्रकट हुआ है।[18] अन्तिम वर्ष में वर्णन है कि श्री वर्धमान (जिनेन्द्र) ने पद्ममुनि का जो चरित क्या था वही इन्द्रभूति (गौतम गणधर) ने सुधर्मा और जम्बूस्वामी के लिए कहा। वही जम्बू स्वामी के प्रशिष्य उत्तरवाग्मी आचार्य के द्वारा प्रकट हुआ। [19]

उपरोक्त अन्तः साक्ष्य से स्पष्ट है कि राम कथानक गुरू शिष्य परम्परा से रविषेण को कीर्तिधर आचार्य द्वारा मिला। परन्तु कुछ विद्वानों ने इस विषय में आपत्ति की है। उनका मत है कि रविषेण के पद्मपुराण पर विमलसूरि के 'पउमचरियं' का प्रभाव है। इस विषय में पं. नाथूराम प्रेमी के विचार उल्लेखनीय है। उन्होनें अपनी रचना 'जैन साहित्य और इतिहास ' में लिखा है[20] कि ''दोनों ग्रन्थकर्ताओं ने अपने–अपने ग्रन्थ में रचनाकाल दिया है, उससे स्पष्ट है कि पउमचरिउ पद्मपुराण से पुराना है और दोनों ग्रन्थों का अच्छी तरह मिलान करने से मालूम होता है कि पद्मपुराण के कर्ता के सामने पउमचरिउं अवश्य मौजूद था। पद्मपुराण एक तरह से प्राकृत पउमचरियं का ही पल्लवित हुआ संस्कृत छायानुवाद है।'' पं. नाथुराम प्रेमी के समान ही डॉ. कामिल बुल्के भी लिखते हैं कि रविषेण ने मौलिकता का किंचित भी प्रदर्शन नहीं किया है। [21]

उधर अन्तः साक्ष्य में कहीं भी उसकी पुष्टि नहीं होती कि रविषेण ने विमलसूरि से प्राप्त रामकथानक को पदमपुराण में लिपिबद्ध किया हैं जबकि वे विमलसूरि के बजाय कीर्तिधर आचार्य को अपना उप जीव्य ग्रन्थकार लिखते है। गुत्थी को खुलवाने का प्रयास करते हुए डॉ. रमाकान्त शुक्ल[22] ने कुछ सुझाव इस प्रकार दिये है–

1. संभवतः दोनों के आधार भिन्न–भिन्न हों।

2. रविषेण के सामने यदि कोई प्राकृत 'पउम चरियं' रखा हो तो वह उस समय वि. मलसूरी के नाम से प्रसिद्ध न रहा हो।

3. हो सकता है कि 'कीर्तिधर नामक जिन पूर्ववर्ती ग्रन्थकार का उन्होनें उल्लेख किया है, वह विमलसूरि का ही अपरनाम हो अथवा कीर्तिधर के ग्रन्थ को विमलसूरि नामक किसी विद्धान ने कुछ नवीन रूप देकर अपने नाम से कालान्तर में प्रसिद्ध कर दिया हो।

निष्कर्ष रूप में डॉ. रमाकान्त शुक्ल यह मत प्रतिपादित करते हैं कि कीर्तिधर विमलसूरि का ही नाम था। यद्यपि डॉ. शुक्ल ने कवि रविषेण की रचना को मौलिक माना है।[23]

इसी संदर्भ में पं. परमानंद शास्त्री के विचार उल्लेखनीय है कि अपभ्रंश भाषा के कवि स्वयंभू ने पउमचरिउ के आधार के लिए श्रेष्ठ वक्ता कीर्तिधर का उल्लेख किया है परन्तु प्रेमी जी ने इसका कोई उल्लेख नहीं किया है। इससे स्पष्ट है कि रविषेण ने पद्मचरित में पद्म मुनि का चरित कीर्तिधर नाम के आचार्य के द्वारा लिखित किसी ग्रन्थ से लिया है और उसी के अनुसार इसकी रचना की गई है, पर कीर्तिधर आचार्य का अन्य कोई उल्लेख इस समय उपलब्ध नहीं है और न अन्यत्र से उसका समर्थन होता है। जान पड़ता है कि उनका यह ग्रन्थ विनष्ट हो गया है। इस तरह बहुत सा प्राचीन साहित्य सदा के लिए लुप्त हो गया है।[24] स्वयंभू ने पउमचरिउ की रचना का स्रोत बताया है, वही स्रोत रविषेणाचार्य द्वारा बताया गया है।[25] अतः संभव है कि कीर्तिधर नाम के आचार्य द्व ारा लिखित ग्रन्थ के आधार पर ही रविषेणाचार्य व स्वयंभू ने अपने ग्रन्थों की रचना की।

निष्कर्ष –
उपर्युक्त विद्वानों के विचारों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रविषेण का पद्मपुराण विमलसूरि के पउम चरिउं का छायानुवाद मात्र नहीं है, उसमें कुछ मौलि. कता अवश्य है। 'पद्मपुराण' दिगम्बर स्वरूप अधिक रखता है, जबकि विमलसूरि के 'पउमचरियं' में जैन सम्प्रदाय के दिगम्बर, श्वेताम्बर व यापनीव तीनों सम्प्रदायों का समावेश हो गया है। इसी प्रकार राजा दशरथ की रानियों के नाम व संख्या को लेकर भी दोनों में थोड़ा भेद है। विमलसूरि दशरथ की तीन रानियां–कौशल्या, कैकयी व सुमित्रा मानते हैं जबकि रविषेण ने चार रानियां –अपराजिता, सुमित्रा, शुभ्रभा व कैकयी को स्वी. कार किया है।[26] प्रश्न उठता है कि यह भेद क्यों आया? कथानक सम्बन्धी जो समानता दोनों ग्रन्थों में दिखाई देती है, उसका एक कारण यह हो सकता है कि दोनों लेखकों को प्राचीन जैन आगम साहित्य के समान परम्परायें मिली हैं व अधिक सम्भावना इस बात की है कि 'कीर्तिधर' नामक आचार्य की रचना दोनों का आधार रही, परन्तु दुर्भाग्य से कीर्तिध ार की यह रचना उपलब्ध नहीं हैं अन्यथा यह बात बहुत आसानी से कही जा सकती थी।

REFERENCE
1. पद्मपुराण ...123/182. 2. डॉ. रमेशचंद जैन, पद्मचरित में प्रतिपादित भारतिय संस्कृति में डॉ. ज्योति प्रसाद जैन लिखित प्राक्कथन, पृ. 6. 3. डॉ. रमाकान्त शुक्ल, जैनाचार्य रविषेणकृत पद्मपुराण और तुलसीकृत रामचरित मानस, पृ. 10. 4. कृतकद्मोदयोघोता प्रदवर्षपरिवर्तिता। मुर्तिः काव्यमयी सोकं रवेरियरवेःप्रिया।। हरिवंश पु. , 1/34. 5. जेकिह रमणिज्ये तरंग–पउमाणचरित पित्थारे। वयवगणतातजिज्जे से कइणो जडिय–रविषेण।। – कुवलयमाला, 4.1. 6. पुणु रविषेशचरिय–पसाएं। बुद्विएं अवगाणिय कहराएं।। – पउम चरिउ, 1/2/9. 7. पं. नाथूराम प्रेमी, जैन साहित्य और इतिहास, पु. 286–290. 8. ''आसीदिन्द्रगुरीर्दिवाकरयतिः शिष्यों रूप चार्हन्मुनि। स्तस्मात्सइगणसेन सन्मुनिरदः शिष्यों रविस्तु स्मृतः।। – पद्मपुराण ., 123/165. 9. पं. नाथूराम प्रेमी, जैन साहित्य और इतिहास, पृ. 88. 10. परमानंद शास्त्री, जैन धर्म का प्राचीन इतिहास, पृ. 156, भाग–2. 11. डॉ.. नेमिचन्द्र शास्त्री, तीर्थकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा, पृ. 277, खण्ड–2. 12. डॉ. रमाकान्त शुक्ल, जैनाचार्य रविषेण कृत पद्मपुराण और तुलसी कृत रामचरित मानस,, पृ. 11 से उद्धृत। 13. वही, पृ.11. 14. डॉ. रमाकान्त शुक्ल, जैनाचार्य रविषेण कृत पद्मपुराण और तुलसीदास कृत रामचरित मानस, पृ. 12. 15. कामित बुल्के,, रामकथा, पृ. 727–730. 16. 'महावीर स्मारिका' 1978, खण्ड–2 में छपा डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे का लेख, रामायण और जैन रामकथा। 17. Prof. B.J. Sandesara में विभिन्न देकर वसुदेवहिंदी को पउमचरिय से प्राचीन सिद्व किया है। Dr. K.R. Chandra भी उक्त तर्कों से सहमत होते हुए लिखते हैं– It is possible that Vasudevahindi was composed earlier than paumcariyam. देखिए Dr. K.R. Chandra, A critical study of Paumcariyam, P.274. 18. वर्द्धमानजिनेन्द्रोक्तः सोएवमर्गागणेश्वरम। इन्द्रभूतिः परिप्राप्तः सुधर्म धारणीभयम।। प्रभवं क्रमतः कीर्ति ततो नुत्तरवाग्मिनय। लिखितं तस्य संप्राप्य स्वेर्यत्नों यमुदगतः।। – प. पु., 1/41–42. 19. निर्दिष्ट सक्सेन भुवमेः श्रीवर्द्धमानेनवत तत्त्यं वासवभूसिना निगदितंजम्बों: प्रशिष्यस्य च। शिष्योणोत्तरवाग्मिना प्रकटितं पद्मस्य वृतं मुनेः, श्रेयः साधुसमाधिवृद्विकरणं सर्वोत्तमं मंगलम्।। –प.पु. 123/167. 20. नाथूराम प्रेमी, जैन साहित्य और इतिहास, पृ. 89. 21. रामकथा, पृ. 68. 22. डॉ. रमाकान्त शुक्ल, आचार्य रविषेण कृत पदमपुराण और तुलसीकृत रामचरित मानस, पृ.52. 23. वही, पृ.52–53. 24. पं. परमानंद शास्त्री, जैन धर्म का प्राचीन इतिहास, भाग–2, पृ. 157. 25. पउमचरिय, 1/2/6–9. 26. पउमचरिय व पद्मपुराण के कथानक में प्रमुख भेद के लिए देखिए–